National Journal of Multidisciplinary Research and Development
ISSN: 2455-9040; Impact Factor: RJIF 5.22
www.nationaljournals.com
Volume 2; Issue 1; January 2017; Page No. 48-50

काव्य में सौन्दर्य–विस्तार के साधन और रस

डॉ0 सुरसरि तरंग मिश्र

प्रवक्ता–हिन्दी, उ0प्र0 सैनिक स्कूल, सरोजनी नगर, लखनऊ, उत्तर प्रदेश, भारत।

प्रस्तावना

डॉ0 नगेन्द्र ने रस सिद्धान्त विषयक विभिन्न आक्षेपों का निराकरण करते हुए लिखा है कि, ''जीवन के समस्त रूपों तथा विविध मूल्यों के साथ रस सिद्धान्त का पूर्ण सामंजस्य है जिसमें विभिन्न वादों के अन्तर्विवरोध समाहित हो जाते हैं.....जीवन की भूमिका से जब तक मानवता से महत्तर सत्य का आविर्भाव नहीं होता–और साहित्य की भूमिका में जब तक मानव संवेदना से अधिक रमणीय सत्य ही उद्भवना नहीं होती, तब रस सिद्धान्त से अधिक प्रामणिक सिद्धान्त की प्रकल्पना भी नही की जा सकती।

'कवि की अपनी सीमा होती है–''कबिहि अरथु आखर बल साँचा। अनुहरि ताल गतिहिं नटु नाचा।'' नट ताल गति पर ही नृत्य करता है पर ताल गति को पार करके ही नृत्य–नृत्य होता है। उसी प्रकार कविता भी शब्दार्थों की सीमाओं को लाँघकर कुछ और भी ध्वनित करती है।[1] इस प्रकार जब काव्य अपने परिवेश में विभिन्न साधनों को समाविष्ट कर लेता है तब वह रसानुभूति की विशिष्ट संभावनाओं के द्वार खेल देता है। इस प्रकार ज्यों–ज्यों काव्य वस्तु का विसर होता है सौन्दर्य एवं अनुभूति के प्रसार की गति तीव्र होती है। कल्पना, बिम्ब, प्रतीक एवं मिथक काव्य की सौन्दर्य मूलक विशेषताओं को उद्घाटित कर रस को अधिकाधिक जीवंत एवं ग्राह्म बनाते चलते हैं।

उद्देश्य

आचार्य शुक्ल कल्पना का प्रधान कर्म क्षेत्र रस का आधर खड़ा करने वाला विभावन व्यापार मानते हैं। इन्होंने लिखा है कि, ''रस का आधर खड़ा करने वाला जो विभावन व्यापार है, कल्पना का प्रधान कर्मक्षेत्र वही है।''[2] 'कल्पना ही वह तत्व है, जिससे कलाकार को नूतन सृजन ओर अभिनव रूप व्यापार–विधान की शक्ति प्राप्त होती है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि कल्पना कलाकार की सृजन–शक्ति है।'[3]'' अनुभूति या भावना काव्य का प्रेरक तत्त्व है, उसकी मूलभूत सत्ता है। कल्पना अनुभूति का क्रियाशील स्वरूप है'' ।[4]

'कला दर्शन में कल्पना शब्द उस सम्पूर्ण प्रक्रिया का द्योतक है जो काव्य सृष्टि मे आदि से अंत तक व्याप्त रहती है। कल्पना का मूल स्रोत अनुभूति है ओर उसकी परिणति है'–'काव्य की रूपात्मक अभिव्यंजना। इस प्रक्रिया में गतिमान तत्व अनुभूति हे और इस प्रकार कल्पना अनुभूति से अभव्यंजना तक विस्तृत है।'[5]

चित्रात्मक प्रतिभा के धनी निराला जी अमूर्त सम्भावना को कल्पना के माध्यम से चित्रित कर सकते में समर्थ होते है–

धीरे–धीरे फिर बढ़ा चरण,
बाल्य की केलियों का प्रांगण,
कर पार कुंज तारूण्य सुधर
आयी लावण्य भार थर–थर
ज्यों मालकोश नव वीणा पर'[6]

जिस प्रकार बसन्त के आगमन से कुंजों में तरूणाई का मादक लावण्य छा जाता है और लताएँ, कलियाँ सौन्दर्य के भार से कम्पित हो चलती हैं, वेसे ही यौवनावस्था के सौन्दर्य भार से तेरी देहयष्टि कम्पित हो चील। जैसी नई वीणा पर मालकोश राग का मधुर संगीत बजता है... .....दृश्य की व्जना के लिए श्रव्य संवेदना का उपयोग–कल्पना ही यह असाध्य साधन कर रस उत्पन्न करती है। इसी तरह 'प्रसाद' जी ने 'कामायनी' में श्रद्धा की दृष्टिरंजना मूर्ति को शब्दों के द्वारा चित्रित करने की चेष्टा की है वहाँ उन्होंने कल्पना का ही सहारा लिया है–

नील परिधान बीच सुकुमार
खुल रहा मृदुल अधखुला अंग।
खिला हो ज्यों बिजली का फूल,
मेघ बन बीच गुलाबी रंग।[7]

यहाँ मानस मूर्ति के निर्माण क्रम में आए हुए मेघ, वन और बिजली मात्र एक स्थान पर एकत्रित भर हो सके हैं परस्पर विलीन होकर पुष्प का रूप ग्रहण नहीं कर सके हैं। 'इनको पढ़कर सहृदय–चित्त में एक सुदूरवर्ती सम्भावना अवश्य जगती हे कि यदि बिजली का फूल हो, तो वह कितना सुन्दर होगा'। 'तुलसीदास' ने 'रामचरितमानस' में विवाह–प्रसंग के अन्तर्गत दो स्थिति–चित्रों को मानसमूर्ताभिमान के रूप में उपस्थित किया है–

सोहत जनु जुग जलज सनाला।
ससिंहि समेत देत जयमाला।[8]
एवं
अमिय पराग जलज भरि नीके।
ससिंहि भूष अहि लोभ अमीके।[9]

सीता को सिन्दूर दे रहे हैं। इन दोनों स्थिति–चित्रों को प्रस्तुत करने में महाकवि ने 'फैसी'का ही सहारा लिया है क्योंकि प्रथम चित्र में आए हुए सनाज जलज ओर शशि केवल एकत्र ही हो सके हैं, तादात्म्य ओर तदनुरूप नहीं। पुनः दूसरे चित्र में आए जलज, शशि और अहि एकत्र होकर भी अपनी पृथकता नही खो सके हैं। वास्तविक जगत् में भी कमल, चाँद और साँप का कोई निकट सम्बन्ध नहीं रहने से इन पंक्तियां पढ़ने के उपरान्त हमारे मन में केवल एक सम्भावना जगती है जिससे रसानुभूति प्राप्त होती है।

बिम्ब– 'बिम्ब–विधान कला का क्रिया पक्ष है जो कल्पना से उत्थित होता है। कला जगत्में कल्पना के विका सकी एक सरणि है। कल्पना से बिम्ब का आविर्भाव होता है और बिम्बों से प्रतीक का। जब कल्पना मूर्त रूप धारण करती है, तब बिम्बों की सृष्टि होती है। .....अतः कला विवेचन की तात्विक दृष्टि से बिम्ब कल्पना ओर प्रतीक का मध्यस्थ है। '[10] बिम्ब विचार को कल्पना एवं मानसिक क्रिया के माध्यम से किसी प्रकार इन्द्रियगम्य बनाता है। कवि सूक्ष्म अनुभूति एवं कल्पना को प्रभावशाली ढंग से समझाने हेतु इसी प्रकार बिम्ब सृष्टि करते हैं इसके लिए जायसी का रहटघटी का बिम्ब प्रस्तुत हे–

'मुहमद जीवन जल भरन, रहट घटी कै रीति।
घरी जो आई जल भरी, ढरी जनम गा बीति।।' (जायसी)

रहटघटी के व्यापार से जीवन की प्राण सम्पन्नता एवं उससे रहित हो जाने में प्राणहीनता के व्यापार के माध्यम से समय की अल्पता एवं जीन की क्षण्भंगुरता को भली–भाँति स्पष्ट किया गया हे। इसी प्रकार बिम्ब रूप सौन्दर्य ओर गुण को काव्य में अत्यन्त सरलता से चित्रित करते हैं जिससे चित्रण में नव्यता एवं ताजगी के कारण रसानुभूति होती है–रूप सौन्दर्य का बिम्ब–

कुन्दन को रंग फीको लगै, झलके असि कंगन चारू गोराई।
आंखिन में अलसानि चितौनि में मंजु बिलासनि की मधुराई।
को बिन मोल बिकात नहीं मतिराम लखै अँखियनि लुनाई।
ज्यों–ज्यों निहारिये नियरे ह्वै नैननि त्यों–त्यों खरी निकसे री निकाई।
(मतिराम)

गुण का चरित्र–

कोमल किशोर सुन्दरता की मैं करती रहती रखवाली,
मैं वह हल्की–सी मसलन हूँ जो बनती कानों की लाली।
(कामायनी)

'राम की शक्ति–पूजा' में मशाल का उपयोग स्वतंत्र प्रतीक के रूप में न होकर एक व्जक प्रभावशाली बिम्ब के अंग के रूप में हुआ है किंतु वह पूरे बिम्ब के अंत में है। ओर समग्र प्रभाव का केन्द्र बिन्दु होने के कारण उसकी व्यंजना अधिक प्रतीकात्मक हो उठी है–

है अमानिशा, उगलता गगन धन अंधकार;
खो रहा दिशा का ज्ञान; स्तब्ध है पवन–चार;
अप्रतिहत गरज रहा पीछे अम्बुधि विशाल;
भूधर ज्यों ध्यानमग्न; केवल जलती मशाल।[11]

यहाँ सम्पूर्ण बिम्ब स्थिति– व्यंजक है। अमानिशा का अंधकार समूची वानर–सेना की निराश मनःस्थिति का व्यंजक है। दिशा बोध का लुप्त होना किंकर्तव्यविमूढता की स्थिति का परिचायक हे। पवन संचरण रूकना साँस रोककर राम के वक्तव्य की प्रतीक्षा करना सूचित करता है। समुद्र–गर्जन रावण पक्षीय दुर्दम्यता एवं उसके साम्प्रतिक विजयोल्लास की ओर संकेत करता है। पर्वत राम के समान या राम पर्वत के समान ध्यान मग्न हैं और उनहीं की अक्षत वर्तमानता पूरी सेना के लिए इस अफाट अंधकार में एक मशाल के समान है। प्रकट है कि यह शुद्ध प्रतीक–विधान नहीं है, 'बहुत करके यह प्रतीकात्मक बिम्ब विधान बनता है अन्यथा यह व्यंजक बिम्ब विधान ही है।[12] इस प्रकार यह बिम्ब विधान काव्य को रसमयता सम्प्रक्त करता है। पुष्पवाटिका के परिवेश की स्मृति से संबंधित निम्न बिम्ब अपनी व्यंजकता के कारण प्रेम की रसानुभूति को अभिव्यंजित करता है–
कांपते हुए किसलय, –झरते पराग समुदय, गाते खग नव जीवन परिचय, –तरू मलय–वलय, ज्योतिः प्रपात स्वर्गीय।[13]
मिथक– मिथकों के माध्यम से साहित्यकार अपनी रचना में जहाँएक ओर रसमयता का संचार करने में सफल होता है वहीं दूसरी ओर रचना के विषय, शैली, भाषा आदि में गाम्भीर्य लाने में सफल होता हे। उसका पाठकों के मस्तिष्क पर गहरा प्रभाव पड़ता है। इसलिए विश्व के सम्पूर्ण देशों के साहित्य में मिथकों का प्रचुर मात्रा में प्रयोग देखा जाता है। मिथक और फैंटेसी का गहरा एवं जन्मजात रिश्ता है। फैन्टेसी–निर्माण के सारे उपकरण (स्वप्न, दिवास्वप्न, अतीत–चिन्तन, योजना–निर्माण, अवचेतन आदि) मिथकों के निर्माता रहे हैं।
फैन्टेसी– कविता में फैन्टेसी के ही माध्यम से कोई रचनाकार प्राचीन सन्दर्भों को सशक्त एवंम् सार्थक रूप में ला सकता है। मुक्तिबोध ने अनेक पौराणिक ऐतिहासिक पात्रों तथा घटनाओं का प्रतीकात्मक रूप में उपयोग किया है अथवा उन्हें व्यंग्य का माघ्यम बनाया है। 'कामायनी'का समूचा ताना–बाना फैन्टेसीय है– मनु के अतीत–चिन्तन (देव जाति का विलास और वैभव) से लेकर श्रद्धा के दिवास्वप्न (मनु का इडा के साथ मनाचार एवं उसकी परिणति) तक फैन्टेसी के अनेक रूप सामने आते रहते हैं।
राम की शक्ति पूजा में भी स्मृति को ही आधार बनाया गया है। दिन भर के युद्ध के बाद अपने शिविर में सेना नायकों तथा परामर्शदाताओं के बीच बैठे विषण्ण राम को सहसा ही सीता से अपने प्रथम मिलन का स्मरण हो जाता है– घने अंधकार में बिजली की कौंध के समान। यह समूचा प्रकरण बिम्बाात्मक है। स्मृत्याश्रयी इस बिम्ब के ब्याज से राम क्षण भर के लिए अपनी वर्तमान स्थिति से मुक्ति पाकर अतीत की कुछ घटनाओं को प्रत्यक्षतः देखने लगते है, तो वे फैन्टेसी की स्थिति में आ जाते हैं–

वे आये याद दिव्य शर अगणित मन्त्रपूत,
फड़का पर नभ को उड़े सकल ज्यों देवदूत,
देखते राम, जल रहे, शलभ ज्यों रचनीचर
ताडका, सुबाहु, विराध, शिरस्त्रय दूषण खर। [14]

यह स्थिति क्षणिक ही है, क्योंकि इसी क्रम में उन्हें शक्ति के भीषण रूप का स्मरण हो आता है जिसे उन्होंने आज युद्ध में देख था–

फिर देखी भीमा मूर्ति आज रण देखी जो,
आच्छादित किए हुए सम्मुख समग्र नभ को,
फिर सुना–हँस रहा अट्टहास रावण खल–खल [15]
रावण का अट्टास सुनना भी फैण्टेसी की ही स्थिति है।

मुक्तिबोध ने मिथकीय प्रकरणों का उपयोग अपने कथ्य के अनुरूप कइ प्रकार से किया हे। उदाहरणार्थ–'अँधेरे में' कविता में भैरव का सन्दर्भण (चेहरे का आधा भाग सिन्दूरी–गेरूआ/टज्ञध्ज्ञज्ञ भाग कोलतारी भैरव/आबदार) विप्रूपण की शैली में हुआ है। मिथक–मूर्ति के विस्थापन ओर विद्रूपीकरण द्वारासमकालीन युग–सत्यों की व्यंजना नई कविता तथा सोठात्तरी कविता का अपना तेवर रहा है, जिसके पीछे मुक्तिबोध की खुरदुरी कविताओं की खास भूमिका रही है। 'लार टपकाती हुई आत्मा की कुतिया,' 'सत्–चित–वेदना', चन्द्र है सविता है, पोस्टर ही कविता है' [1] जैसे विसंगतिवादी प्रयोग मुक्तिबोध के काव्य को नई अर्थव्यंजकता प्रदान करते हैं और उसकी सम्प्रेषणीयता को द्विगुणित करते हैं। कर्मकाण्ड और जादू से संबंधित मुक्तिबोध ने बड़े सशक्त रूप में उपयोग किया है। इस प्रकार काव्य के विस्तार में कल्पना बिम्ब, गुण, मिथक और फैन्टेसी के समन्वय से काव्य का विस्तार होता है और काव्य के विस्तार से रस की नित्य नवीन अर्थ भूमियाँ अवतरित होती हैं।

संदर्भ

1. चिन्तामणि– भाग–1 रामचन्द्र शुक्ल पृ0 155 इण्डियन प्रेस प्रा0 लि0 इलाहाबाद संस्करण–1978;
2. रस सिद्धान्त– डॉ0 नगेन्द्र पृष्ठ 363 नेशनल पब्लिशिंग हाउस दिल्ली संस्करण–1978;
3. हिन्दी साहित्य का दूसरा इतिहास– बच्चन सिंह पृष्ठ 159 राजकमल प्रकाशन दिल्ली प्रथम संस्करण;
4. रस मीमांसा– पृ0 105;
5. सौन्दर्यशास्त्र के तत्व–पृष्ठ 129;
6. अनामिका– निराला, पृष्ठ सं0 129 लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद द्वितीय संस्करण;
7. कामायनी(श्रद्धा सर्ग)–जयशंकर प्रसाद, पृष्ठ सं0 52;
8. रामचरितमानस – तुलसीदास–1/264/4 गीता प्रेस गोरखपुर;
9. रामचरितमानस –तुलसीदास–1/325/5 गीता प्रेस गोरखपुर ;

10. सौन्दर्यशास्त्र के तत्व– पृष्ठ 217;
11. अनामिका– निराला, पृष्ठ 154 लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद द्वितीय संस्करण, ;
12. निराला की दो लम्बी कविताएं– जगदीश गुप्त, पृष्ठ 51 लोकभारती प्रकाशन प्रथम संस्करण वर्ष–1980;
13. अनामिका– निराला, पृष्ठ 155 द्वितीय संस्करण लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद द्वितीय संस्करण ;
14. अनामिका– निराला, पृष्ठ 155–156 द्वितीय संस्करण लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद द्वितीय संस्करण ;
15. अनामिका– निराला, पृष्ठ 156 द्वितीय संस्करण लोकभारती प्रकाशन इलाहाबाद द्वितीय संस्करण ;